International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-2, Issue-4
August- 2015
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

लोक नायक जय प्रकाश नारायण के अनुसार शिक्षा

डॉ ए0 बी0 भटनागर
शोध निर्देशक
मेवाड़ विश्वविद्यालय

सर्मिला रानी
शोधार्थी
मेवाड़ विश्वविद्यालय

शिक्षा के स्वरूप के बारे में जयप्रकाश नारायण ने एक रूपरेखा अपनी पुस्तक मेरी जेल डायरी में इस प्रकार दी है– ''शैक्षिक रूपरेखा–ग्रामीण स्कूल, कृषि, ग्रामीण उद्योग, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र (क्षेत्र में छात्रों के लिए अर्थपूर्ण) विज्ञान, भाषा और साहित्य आर्थिक सहयोग और सहकारिता (कानून नियम, संविधान) ग्राम सभा (निर्णय लेने वाली और लागू करने वाली) ग्राम अदालत, लेख तथा बहीखाता (कृषि–व्यापार तथा ग्रामीण उद्योग, स्वच्छता (शौचालय, जल–सम्भरण), जीवाणु, जीव विज्ञान स्वास्थ्य (ग्रामीण रूप रेखा के सम्बंध में) बागवानी, प्राणी विज्ञान, खुराक तथा पोशाहार (साधन उपलब्ध), गैंस संयंत्र, खाद तैयार करना आदि।

जयप्रकाश नारायण ने शिक्षा में व्याप्त कमियों को दूर करने के लिए और उसमें सुधार लाने के लिए अनेक सुझाव दिये हैं। जो उनकी इस विचाराभिव्यक्ति से स्पष्ट हैं–

"My appeal first of all is to the teaching community. It will not be seriously challenged that teachers are also responsible for the deplarable state of education. But inspite of the general fall in standards, there are still many teachers who have a more honourable concept of their profession. Here as well as elsewhere goodness is in retreat before evil. This trend must be reversed. However difficult and hopeless the present situation may be, if the enlightened teachers acted togethers they could certainly make a difference."

जयप्रकाश नारायण ने अपने मगथ विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर दिये भाषण में कहा–

"This second group to which I address my appeal is the community at large. It is undenlable that since independence there has been a great deal of interest around introduction among the general public, including those of rural areas. As a result, there has been an almost uncontrolled proliferation of schools, colleges and universities. But apart from the quantitative aspect of educational expansion, the community has evinced no further interest in education. The economic motivation behind education of course cannot and should not be eliminated. But unless the community felt that education must also serve other purpose, such as character and personality building, intellectual growth and development of knowledge, national and social reconstruction, there can be no hope for improvement. As things stand, the community cannot be expected to act in the matter, but its enlightened members may get together at all possible levels to devote time and attention to this question. Joint conferences and seminars of teachers and citizens, and possibly of students also, should be held as often as possible, Occasionally such conference held even now, but a sustained interest should be created among the enlightened members of the community and the teaching profession. Not

only should there be sustained discussion but there should also be concrete and constructive action. Needless to say that all these moves should be non-partisan and detached."

जयप्रकाश नारायण ने आगे कहा–

"I appeal to the more for seeing and courageous students to seek other ways to self expression and self-development for improving the conditions of their education. And what about their responsibilities towards their country? During the freedom movement students had played a glorious part. They can play a still more glorious part today, for building a new India is a much more challenging and important task than winning freedom."

व्यक्तियों की अभिवृत्तियों का परिष्कार करना दर्शन का कार्य है। हम अपने दैनिक कार्य में अपने दृष्टिकोण से प्रेरणा लेते है। ये दृष्टिकोण अनेक प्रकार के हो सकते है। इसीलिए ये कहा जाता है कि महान पुरूषों के अपने–अपने दार्शनिक दृष्टिकोण होते है। लोकनायक जय प्रकाश जी का शिक्षा के प्रति अपना अनौखा, नवीन तथा व्यापक दर्शन रहा है, जिसका प्रस्तुतीकरण प्रकृतिवाद, विचारवाद, प्रयोजनवाद तथा यथार्थवाद का सन्दर्भ लेते हुए किया जायेगा। इस प्रकार से आपकी शैक्षिक विचारधारा की विश्वसनीयता स्पष्ट हो सकेगी।

आज का प्रत्येक मनुष्य प्रतियोगी तथा सहकारी स्वभाव का बन चुका है क्योंकि वह अपने क्षेत्र में सफलता के झण्डे गाड़ना चाहता है। इस कारण से उसमें अहंकार की वृद्धि होती है और वह अपनी संस्कारिता से छुटकारा पाना चाहता है, जो सम्भव नहीं लगता। अतः वह समस्याओं में सदैव उलझा रहता है। वर्तमान शिक्षा के पास इसका कोई हल नहीं है। लोकनायक जय प्रकाश जी ने ''संस्कृति का प्रश्न (पृ0 20–21) में लिखा है :–

''दुर्भाग्यवश आज की शिक्षा का उद्देश्य है स्वामित्वपूर्ण समाज की मान्यताओं को स्वीकार करने और इसके अनुकुल बनाने में आपकी सहायता करना। आपके माता–पिता, आपके शिक्षक और आपके ग्रन्थों का सरोकार सिर्फ इसी बात से है। जहां तक आपको समाज की मान्यतायें मंजूर है, जहां तक आप महत्वकांक्षी है, अधिकतर लोलुप है और शक्ति व प्रतिष्ठा की खोज में दूसरो को दूषित और नष्ट किये जा रहे है, वहां तक आप सम्मानित नागरिक समझे जाते है। लेकिन वह शिक्षा नहीं है। ये तो आपका समाज के ढाँचे के अनुकूल गढ़ने की प्रक्रिया मात्र है।''

आज की शिक्षा की समस्या उपाधियां प्राप्त करके एक अद्द नौकरी पाने की है। अधिक से अधिक धन, पद, मान हथिया लेने की है जो हमें अधिक से अधिक हिंसक बना रही है। इस प्रकार से हम अपनी शक्ति तथा ऊर्जा को व्यर्थ में गवां रहे है और मनुष्य बनने से दूर होते जा रहे है। लोकनायक जय प्रकाश जी ने अपनी कृति संस्कृति का प्रश्न, प्र01 में लिखा हैः–

''निश्चित रूप से शिक्षा व्यर्थ साबित होगी, यदि वह आपको इस विशाल और विस्तीर्ण जीवन को, इसके समस्त रहस्यों को, इसकी अद्भुत स्मणीयताओं को, इसके दुःखों और हर्षों को समझने में सहायता न करें।''

वर्तमान प्रशासन का उत्तरदायित्व भयरहित समाज की स्थापना करना सुनिश्चित किया गया है, लेकिन वर्तमान शिक्षा प्रणाली बच्चों के मन में भय हटाने के स्थान पर उमें भय उत्पन्न करने में सहयोग कर रही है। अतः लोकनायक जय प्रकाश जी का मानना है :–

''हममें से अधिकांश व्यक्ति ज्यों–ज्यों बड़े होते जाते है, त्यों–त्यों भयभीत होते जाते है। हम जीवन से भयभीत रहते है, नौकरी के छूटने से, परम्पराओं से और इस बात से भयभीत रहते है कि पड़ोसी, पत्नी–पति या बच्चें क्या कहेंगे। हम मृत्यु से भयभीत रहते है। इस प्रकार से हमेशा अधिकाश व्यक्ति किसी न किसी प्रकार से भयभीत होते है और जहां भय है, वहां मेद्या नहीं है।''

महान शिक्षाशास्त्री टी0पी0 नन् ने बच्चों में स्वाभाविक विकास पर बल दिया है। लेकिन वर्तमान शिक्षा प्रणाली अनुकरण तथा अनुसरण करने के लिए प्रेरित करती है। वह अनुकरण हमारी स्वाभाविकता को समाप्त करती है और निर्भरता में वृद्धि करती है। यही निर्भरता हमारी तन, मन, धन आदि शक्तियों को संघर्ष में व्यर्थ करती है।

हमान शिक्षा शास्त्री रूसो का कथन है कि मनुष्य स्वतंत्र जन्म लेता है, लेकिन उसे सामाजिक जंजीरों में जकड़ दिया जाता है जो उसके स्वाभाविक विकास के अवरूद्ध ही नहीं करते बल्कि समाप्त ही कर देते है। इसी प्रकार की विचार धारा आज संसार में विद्यमान है जो मानव समाज को देश, राष्ट्र, भाषा, तथा अन्य विवादों के बंधनों में जकड़ चुकी है। परिणाम स्वरूप शिक्षा व्यक्ति की महत्वाकांक्षों की पूर्ति में सलंग्न हो रही है न कि मानव विकास में। लोकनायक जय प्रकाश जी ने लिखा है :–

''यह उन महत्वाकांक्षी स्त्री–पुरूषों की दुनिया है जो प्रतिष्ठा को आत्मसात करके आपसी संघर्ष को जन्म दे रहे है। इनके अतिरिक्त कुछ धर्म गुरू एवं सन्यासी है जो अपने–अपने अनुयायिष्सें के साथ पृथ्वी और स्वर्ग में प्रतिष्ठा की चाह में जी रहे है। यह विश्व पूर्ण भ्रान्ति में जी रहा है। यहां प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी के विरोध में खड़ा है और किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंचने के लिए प्रतिष्ठा, सम्मान, शक्ति व आराम के लिए निरन्तर संघर्ष कर रहा है। यह सम्पूर्ण विश्व ही परस्पर, विरोधी, विश्वासों, विभिन्न वर्गो, जातियों, पृथक–पृथक राष्ट्रीयताओं और हर प्रकार की भूढ़ता और क्रूरता में छिन्न–छिन्न होता जा रहा है।''

आज शिक्षा देने तथा स्मरण करने या ज्ञान को ग्रहण करने की अनेकों विधियों प्रविधियों तथा शिक्षण सूत्र आदि का प्रयोग हो रहा है। इस प्रकार से ज्ञान को खण्डित करके सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिल रहा है। इससे ''स्व'' तथा ''पर'' दो भाव उत्पन्न होते है जबकि जीवन एक अखण्ड सत्ता है जो शिक्षा के समग्र अवलोकन पर निर्भर करता है। अतः सभी को अवलोकन, निरीक्षण श्रवण और मन की शिक्षण विधियों को अपनाना चाहिए ताकि अद्वैत भाव का विकास एवं जन्म प्रत्येक मानव में हो सके।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक ''मैक्डुगल महोदय ने प्राणी में चौदह मूल प्रवृत्तियों का विकास जन्मजात माना है। ये प्रत्येक व्यक्ति की क्रियाशीलता को शक्ति प्रदान करती है। इनको संवेगो के द्वारा देखा जाता है। ये मूल प्रवृत्तियां पलायन (भय), मुमुत्सा (क्रोध), निवृत्ति (घृणा), पुत्र कामना (वात्सल्य), संवेदना (दुःख), काम (कामुकता), जिज्ञासा (आश्चर्य), आत्महीनता (अधीनता की भावना), आत्म गौरव (आत्माभिमान), सामूहिकता (एकांत), भोजन की खोज (भूख), संचय (स्वत्व का भाव), रचनात्मकता (कृतिभाव), ह्रास (आमोद) तथा संवेग के रूप में है। इनका सही विकास तथा प्रकाशन करना शिक्षा का कार्य होता है। लेकिन आज शिक्षा संवेदनहीन हो रहा है। शिक्षा द्वारा आज के युवाओं में कुंठा, निराशा, विषाद तथा क्रूरता बढ़ रही है लोकनायक जय प्रकाश के अनुसार वर्तमान शिक्षा हमारे मन को प्रतिवद्व करती जा रही है। एक प्रतिवद्व मन वाला व्यक्ति कभी भी किसी घटना को गराई से देखने की क्षमता नहीं रखता। आज की शिक्षा क्रिया काण्ड तथा औपचारिकता तक ही सीमित रह गयी है जिससे पाखण्ड पनपता है और पाखण्डी व्यक्ति किसी भी सत्य को नहीं जान सकता।

आज का व्यक्ति दिखावा तथा बनावटी जीवन जी रहा है जो वर्तमान शिक्षा प्रणाली की देन है। वह निष्क्रिय, अकर्मण्य और आलसी बनता जा रहा है। महात्मा तुलसीदास जी ने श्री रामचरित्रमानस में वाक पटु तथा दिखावा करने वाले व्यक्ति को अधिक योग्य, महान संत तथा महिमा वाला बतलाया है, यह आज की पहचान है। इसके विपरीत शांत, सहज तथा कर्मठता का जीवन व्यतीत करने वाले लोगों की घोर उपेक्षा की जा रही है। लोकनायक जय प्रकाश जी का विचार है कि प्रतियोगिता, महत्वाकांक्षा, ईर्ष्या, अर्कण्यता तथा अनुकरण की धुरी पर घूमने वाली शिक्षा मानव जीवन में कभी भी सुख, शांति, प्रेम, करूणा एवं मैत्री को उत्पन्न नहीं कर सकती, जो मानव को सही रूप में मानव बनाती है।

लोक नायक जय प्रकाश नारायण के अनुसार शिक्षा के कार्य एवं अवधारणा

महान शिक्षा शास्त्री ''जान ल्यूवलाक'' ने शिक्षा के कार्यों के लिये लिखा है कि ''शिक्षा का कार्य वकील या लोहार, सिपाही या अध्यापक तथा किसान या कलाकार बनाना नहीं है, बल्कि मनुष्य बनाना है। ''इस कथन से स्पष्ट होता है

कि शिक्षा का प्रबन्ध व्यवसायी बनाने के लिए नहीं होना चाहिए बल्कि मानवीय गुणों से युक्त व्यक्तित्व का विकास करना होना चाहिए। यहां पर शोधकर्ती लोकनायक जय प्रकाश जी द्वारा वर्णित शिक्षा के विभिन्न कार्यों पर प्रकाश डालेगी ताकि शोध के उद्देश्य को विश्लेषित कर सके।

अंतः क्रिया कौशल :–

शिक्षा के द्वारा अध्यापक और शिष्य के बीच ज्ञान का जो आदान–प्रदान होता है, उसका प्रभाव दोनों पर पड़ता है। शिक्षक, बच्चों को समझकर सहीं शिक्षा देता है और दी जाने वाली शिक्षा के द्वारा दोनों के व्यक्तित्व का कितना विकास हो रहा है, इस प्रभाव को ही अंतः क्रिया बतलाया गया है। मनोविज्ञानी स्टेग्नर का मत है प्रत्येक व्यक्ति उद्दीपथ के प्रभाव से दूसरों को प्रभावित करता है और प्रतिचार के प्रभाव स्वरूप वह अन्य को प्रभाव से स्वयं का विकास भी करता है। इस प्रकार से शिक्षा, शिक्षक तथा शिष्य दोनों को शिक्षित करती है। लोकनायक जय प्रकाश जी का मानना है कि शिक्षा का कार्य बच्चों को उचित ढंग से शिक्षित करना है ताकि वर्तमान समाज की बुराईयों को दूर करके नूतन विश्व की रचना की जा सके।

वास्तविक शिक्षा, शिष्य–गुरू के साथ–साथ अभिभावकों को भी शिक्षित करती है। शिक्षा के द्वारा ही मानव मन को बदलने की क्रान्ति सम्भव है। एक तरफ शिक्षा समाज में फैली बुराईयों को नष्ट करती है और दूसरी ओर उन बुराईयों से बचाव भी करती है। लोकनायक जय प्रकाश जी ने ''संस्कृति का प्रश्न, पृ0 21 में लिखा है :–

''वास्तविक शिक्षा आपको केवल संस्कार मुक्त होने में ही सहयोग नहीं देती है, अपितु वह आपको आपके दैनंदिनी जीवन की सम्पूर्ण प्रक्रिया को समझाने में भी मदद करती है ताकि आप स्वतंत्रता के साथ बढ़ सके और नूतन विश्व का निर्माण कर सके। एक ऐसा विश्व जो वर्तमान से बिल्कुल भिन्न हो। दुर्भाग्य से न तो आपको शिक्षक, न आपके माता–पिता और नहीं सर्व साधारण व्यक्ति इन विषयों में दिलचस्पी लेते है। इसीलिए शिक्षा–शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों को शिक्षित करने की प्रक्रिया होनी चाहिए।''

स्वाभाविकता का विकास :–

समाजशास्त्री मानव बनाम मानव, मानव बनाम समाज और समाज बनाम समाज आदि रूप में मानव–सम्बन्धों की व्याख्या करते है। यदि आज का समाज दूषित हो चुका है तो समस्त समाज के सदस्य भी दूषित हो चुके है। हममें से प्रत्येक पद, प्रतिष्ठा, शक्ति तथा सम्पत्ति का अधिकार चाहता है, अतः आपस में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो चुकी है। इस प्रकार की शिक्षा की मान्यता सभी अभिभावक, शिक्षक सरकारें आदि दिये जा रहे है। लोकनायक जय प्रकाश जी ने ''संस्कृति का प्रश्न पृ0–21'' पर लिखा है :–

''शिक्षा का वास्तविक कार्य यह नहीं है कि वह आपको लिपिक या न्यायाधीश या प्रधानमंत्री बना दें। अपितु इसका कार्य है, आपको इस सद् हुए समाज के सम्पूर्ण ढांचे को समझने में और ''स्वाभाविक, अपूर्व समाज या विश्व का निर्माण कर सके। एक ऐसा विश्व जो अधिकार शक्ति और प्रतिष्ठा पर आधारित न होकर स्वाभाविक विकास पर आधारित हो।''

प्रज्ञापूर्ण व्यक्तित्व :–

आज भौतिक वाद का विकास ज्ञान की विभिन्न खोजों का परिणाम मात्र है लेकिन वह मानवीय समस्यायें का हल नहीं कर पाया। जब यह समझ में आना प्रारम्भ होता है तो प्रज्ञापूर्ण व्यक्ति का जन्म होता है। प्रज्ञावान व्यक्ति ही ज्ञान का सही–सही उपयोग कर सकता है और अस्तित्व के साथ हमारे क्या सम्बन्ध है? इसको भी वह आसानी से समझ सकता है जो शिक्षा के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। अस्तित्व के साथ वृहत सम्बन्ध–जल, हवा, मृदा, पशु–पक्षी व्यवहार के साथ समायोजन बनाना भी शिक्षा का कार्य होता है। यह कार्य प्रकृति के साथ स्थापित ऑतरिक सुसंवादों से विकसित बोध और प्रज्ञा के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए लोकनायक जय प्रकाश जी ने ''शिक्षा केद्रों के नाम पत्र (पृ0 9) में लिखा है :–

''जब शिक्षा और विद्यार्थी परस्पर सम्बन्धों के असाधारण महत्व को वस्तुतः समझने में जुटे होते है तब वे स्कूल में अपने बीच एक सही और सच्चे सम्बन्ध को स्थापित कर रहे है। यह शिक्षा का ही अंग नहीं बल्मि यह मात्र शैक्षिक विषयों को पढ़ाने से कही बड़ी चीज है।''

उत्तरदायित्व बोध–

सामान्य रूप से उत्तरदायित्व एक अपनत्व है जो व्यक्ति के संस्कारों, जिसमें देश, धर्म, अंधविश्वास, राष्ट्रवाद, वैज्ञानिक, राजनैतिक सिद्धान्तों आदि का संगठन होता है। लेकिन यह सीमित क्षेत्र वह परिचायक है। परिणाम स्वरूप आज विश्व से शांति और अमन समाप्त होता जा रहा है। शिक्षा के द्वारा हमें बच्चों को समग्र उत्तर दायित्व का बोध कराना चाहिए, जिससे वे समिष्ट के प्रति उत्तरदायित्व का निर्वहन जीवन भर कर सके। जैस लोकनायक जय प्रकाश जी ने शिक्षा केन्द्रों के नाम पत्र (पृ0–18) में लिखा है :–

''मनोवैज्ञानिक स्तर पर सभी मनुष्य एक ही जाति के है उनमें एक ही आत्मा और मानस क्रियाशील होता है। यदि कोई ध्यानपूर्वक इस मनोवैज्ञानिक ढाँचें का अवलोकन करे तो वह पायेगा कि जैसे वह दुःख भोगता है वैसे ही पूरी मनुष्य जाति विभिन्न मात्राओं में दुःख भोगती है। दुःख यंत्रणा, ईर्ष्या, द्वैष और भय सबका अनुभव है। इसी प्रकार मनुष्य मनोवैज्ञानिक रूप से सभी के जैसा होता है और सम्पूर्ण मानव जाति के प्रति उत्तरदायी भी, न कि सिर्फ स्वयं के प्रति, जो एक मनोवैज्ञानिक भ्रान्ति मात्र है। प्रत्येक व्यक्ति को यह कला सीखनी है ताकि वह सही उत्तरदायित्व के बोध का निर्वहन कर सके।''

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एलन एवं बैंडी स्कार्फजयप्रकाश – एक जीवनी, राधा कृष्ण प्रकाशन, 2 अंसारी रोड दरियागंज, दिल्ली, 1978।
2. अक्षय कुमार जैन जेल से जसलोक तक, स्टार पब्लिकेशंस, प्रा0लि0, आसफ अली रोड, नई दिल्ली, 1977।
3. अयोध्या सिंह भारत का मुक्ति संग्राम, दि मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया, लि0 नई दिल्ली, 1977।
4. आचार्य राममूर्ति सम्पूर्ण क्रांति एक नजर में, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी।
5. आचार्य राममूर्ति लोक समितियां क्यों बनें, कैसे बनें, क्या करें, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1977।
6. आचार्य रामूर्ति सम्पूर्ण क्रांति सबके लिए, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1977।
7. डा0 अमरेश्वर अवस्थी एवं डा0 रामकुमार अवस्थी आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, रिसर्च पब्लिकेशंस इन सोशल साइंसेज, 1744, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 1980।
8. डा0 मस्तराम पाराशर एवं डा0 राधेश्याम शर्मा लोकनायक जीवन–दर्शन, किताब घर, मैन बाजार, गांधी नगर, दिल्ली–31, 1979।
9. दीनानाथ मिश्र आपातकाल गुप्त क्रांति, सरस्वती बिहार, 21 दयानंद मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, 1977।
10. चन्द्रशेखर पण्डित एक युग का अन्त, लोकभारती प्रकाशन, 15 ए0 महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 1977।
11. दीनानाथ मिश्र आपातकाल गुप्त क्रांति, सरस्वती बिहार, 21 दयानंद मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, 1977।
12. दादा धर्माधिकारी सर्वोदय दर्शन, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1969।
13. दादा धर्माधिकारी सम्पूर्ण क्रांति के आयाम, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1978।
14. दुर्गादत्त पन्त जयप्रकाश आंदोलन और बलविहीन लोकतन्त्र ऑल इण्डिया साम्प्रादायिकता विरोधी कमेटी, नई दिल्ली 1975।
15. इन्दू टिक्केकर क्रांति का समग्र दर्शन, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1972।